इकाई 5 मुगल साम्राज्य का विकास : 1526

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

इस इकाई से आपको निम्नलिखित जानकारी प्राप्त होगी:

- बाबर के आक्रमण की पूर्व संध्या पर भारत की राजनैतिक स्थिति के विषय में,
- लोदी शासकों के विरुद्ध बाबर के सफलतम अभियानों की,
- स्थानीय शक्तियों विशेषकर अफगानों तथा राजपूतों के साथ मुगलों के संघर्ष एवं उनकी विजयों के विषय में,
- शेरशाह के उत्थान तथा सुदृढ़ीकरण के बारे में, और
- उन परिस्थितियों तथा कारकों की जिनके द्वारा हुमायूं के नेतृत्व में मुगल शासन की पुनः स्थापना हो सकी।

5.1 प्रस्तावना

वर्तमान इकाई का कार्य क्षेत्र बाबर तथा हुमायूं की अधीनता में भारत में मुगल शासन की स्थापना की प्रक्रिया तक सीमित है। इस इकाई में अफगानों द्वारा प्रस्तुत की गई चुनौती एवं मुगल सत्ता को उखाड़ फेंकने के अफगान प्रयत्नों का भी विवरण किया गया है। अफगान शासन का संक्षिप्त सर्वेक्षण प्रस्तुत करने का भी प्रयास किया गया है। यह इकाई मुख्यतः बाबर तथा हुमायूं के नेतृत्व में किये क्षेत्रीय प्रसार का विवरण प्रस्तुत करती है। मुगल शासन के संगठनात्मक पक्षों का विवरण आगामी खंडों में किया जाएगा।

5.2 बाबर के आक्रमण की पूर्व संध्या पर राजनैतिक स्थिति

तुगलक शासन के पतन के पश्चात् पंद्रहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध राजनैतिक अस्थिरता का दौर था। सैयद (1414-1451) तथा लोदी (1451-1526) शासक दोनों ही विनाशक

शक्तियों का सामना करने में असफल रहे। (देखें इकाई 2) कुलीन वर्ग अवसर प्राप्त होते ही विरोध एवं विद्रोह करते। उत्तर पश्चिम प्रांतों में व्याप्त राजनैतिक अराजकता ने केन्द्र को कमजोर किया। अब हम भारत के विभिन्न भागों में घटित घटनाचक्र का विवरण करेंगे।

मध्य भारत में तीन राज्य थे— गुजरात, मालवा एवं मेवाड़। किंतु मालवा के सुलतान महमूद खिलजी द्वितीय की शक्ति का पतन हो रहा था। गुजरात मुजफ्फर शाह के अधीन था। जबकि मेवाड़ सिसोदिया शासक राणा सांगा के अधीन सबसे अधिक शक्तिशाली राज्य था। मालवा के शासकों पर निरंतर लोदी, मेवाड़ एवं गुजरात के शासकों का दबाव था क्योंकि यह न केवल एक उपजाऊ क्षेत्र एवं हाथियों की आपूर्ति का महत्वपूर्ण स्रोत था अपितु इस क्षेत्र से होकर गुजरात के बंदरगाहों को महत्वपूर्ण मार्ग गुजरता था। अतः यह क्षेत्र लोदी शासकों के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र था। इसके अतिरिक्त यह गुजरात एवं मेवाड़ के शासकों के लिए लोदी शासकों के विरुद्ध मध्यवर्ती राज्य का कार्य कर सकता था। मालवा का सुल्तान एक असक्षम शासक था और उसके प्रधानमंत्री मेदिनी राय के लिए आतंरिक कलहों के कारण राज्य की एकता बनाये रखना मुश्किल था। अंततः मेवाड़ के शासक राणा सांगा ने मालवा एवं गुजरात पर अपने प्रभाव को बढ़ाने में सफलता प्राप्त कर ली। 15वीं सदी के अंत तक राणा सांगा द्वारा रणथम्भौर एवं चन्देरी पर अधिकार प्राप्त करने के साथ ही संपूर्ण राजपूताना उसके अधीन आ गया। दक्षिण में विजयनगर एवं बहमनी दो शक्तिशाली राज्य थे। (देखें पाठ्यक्रम ई.एच.आई.-03, खंड 7) पूर्व की ओर बंगाल पर नुसरत शाह का शासन था। इब्राहिम लोदी के शासन के अंतिम वर्षों में अफगान सरदारों नसीर खां लोहानी, मारूफ फरमूली आदि ने सुल्तान मौहम्मद शाह के नेतृत्व में अलग जौनपुर राज्य की स्थापना करने में सफलता प्राप्त की। इन बड़े राज्यों के अतिरिक्त आगरा के आसपास बहुत से अफगान सरदारों के अधीन कुछ महत्वपूर्ण छोटे-छोटे स्वायत्त क्षेत्र भी थे— मेवात में हसन खां, बयाना में निजाम खां, धौलपुर में मौहम्मद जैतुन, ग्वालियर में तातार खां सारंग खानी, रापरी में हुसैन खां लोहानी, इटावा में कुतुब खां, कालपी में आलम खां, सम्भल में कासिम सम्भली आदि। बाबर के आक्रमण की पूर्व संध्या पर राजनैतिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए सामान्यतः यह कहा गया है (रशब्रुक विलियम) कि उस समय राजपूत राज्यों का एक 'महासंघ' था जो हिन्दुस्तान पर नियंत्रण करने की तैयारी में था। यह भी कहा जाता है कि यदि बाबर का आक्रमण न हुआ होता तो राजपूत अपने प्रख्यात नेता राणा सांगा के नेतृत्व में उत्तर भारत में राजनैतिक सत्ता पर अधिकार करने में सफल हो जाते। यह तर्क दिया जाता है कि क्षेत्रीय राज्यों के बीच राजनैतिक विभाजन की प्रकृति धार्मिक थी और राणा सांगा के नेतृत्व में राजपूत महासंघ, जो कि धार्मिक भावना से प्रेरित था, हिन्दू साम्राज्य की स्थापना करना चाहता था। यह मान्यता **बाबरनामा** में उद्धृत उस अंश पर आधारित है जहां बाबर कहता है कि हिन्दुस्तान पांच मुसलमान शासकों— लोदी (केंद्र में), गुजरात, मालवा, बहमनी तथा बंगाल और दो हिन्दू शासकों— मेवाड़ के राणा सांगा तथा विजयनगर द्वारा शासित है। इसके अतिरिक्त खानवा की लड़ाई के बाद जारी किये गये **फतहनामा** के आधार पर कहा जाता है कि राणा सांगा के नेतृत्व में राजपूत महासंघ धार्मिक भावना से प्रेरित था और उसको "इस्लाम की सत्ता" को उखाड़ फेंकने की भावना से संगठित किया गया था।

किंतु इस तरह के अनुमानों के विषय में इतिहासकारों ने प्रश्न उठाये हैं। बाबर ने ऐसा नहीं कहा कि ये राज्य एक दूसरे के विरुद्ध धार्मिक आधार पर शत्रुता रखते थे। बल्कि बाबर स्वयं स्वीकार करता है कि बहुत से **राय एवं राणा** इस्लाम (मुस्लिम शासकों) के प्रति वफादार थे। यदि हम महासंघ की बनावट को देखें तो हम पायेंगे कि हसन खां मेवाती, महमूद खा लोदी आदि मुसलमान शासक भी इस महासंघ के सदस्य थे और वे बाबर के विरुद्ध राणा सांगा के साथ थे। इसकी अपेक्षा **वाकियात-ए-मुश्ताकी** (1560) में हसन खां मेवाती पर भारत में मुगल सत्ता को उखाड़ने के लिए महासंघ बनाने का आरोप लगाया गया है। वास्तव में यह राणा सांगा नहीं अपितु सुल्तान महमूद था जिसने स्वयं को दिल्ली का राजा घोषित कर दिया था। यद्यपि राणा सांगा निश्चय ही शक्तिशाली था किंतु बाबर अफगान भय से ज्यादा चिंतित था। अतः धार्मिक सिद्धांत का कोई आधार नहीं है।

5.3 मध्य एशिया तथा बाबर

हम पहले ही इकाई 1 में 16वीं शताब्दी के दौरान मध्य एशिया तथा ईरान में राजनैतिक स्वरूपों का विवेचन कर चुके हैं। 15वीं सदी के अंत से तैमूर शासकों की शक्ति का पतन होने लगा था। इस समय तक उजबेगों ने शैबानी खां के अधीन ट्रॉंसऑक्सियाना में अपनी स्थिति मजबूत करने में सफलता प्राप्त कर ली थी। इसी समय के लगभग शाह इस्माइल के नेतृत्व में ईरान में सफवियों का एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उदय हुआ। जबकि और आगे पश्चिम की ओर ऑटोमन तुर्कों का प्रभुत्व था। हम पहले ही बता चुके हैं कि कैसे लगभग संपूर्ण ट्रॉंसऑक्सियाना तथा खोरासान पर शैबानी खां ने प्रभुत्व स्थापित किया। अंततः 1510 में ईरान के शाह इस्माईल ने शैबानी खां को पराजित कर दिया। परंतु थोड़े समय बाद ही ऑटोमन सुल्तान ने 1512 ई० में शाह इस्माईल को पराजित कर दिया। इस प्रकार उजबेगों को संपूर्ण ट्रॉंसऑक्सियाना का स्वामी बनने का पुनः एक बार अवसर प्राप्त हो गया।

बाबर 12 वर्ष की आयु में ट्रॉंसऑक्सियाना की एक मामूली रियासत फरगना की गद्दी पर 1494 ई० में सत्तारुढ़ हुआ। किंतु बाबर को यह उत्तराधिकार सरलता से प्राप्त नहीं हुआ था। मंगोल खान के साथ-साथ तैमूर राजकुमार विशेषकर समरकंद का सुल्तान अहमद मिर्जा दोनों फरगना में रुचि रखते थे। इसके अतिरिक्त बाबर को असंतुष्ट कुलीनों का भी सामना करना पड़ा। इन सभी विपत्तियों के बावजूद बाबर ने मध्य एशिया में अपनी स्थिति को मजबूत करने तथा समरकंद पर दो बार (1497 एव 1500 ई०) अधिकार करने में सफलता प्राप्त की। लेकिन इस पर वह लंबे समय तक अधिकार बनाये रखने में असफल रहा। तैमूर सत्ता के चार केन्द्रों में से एक खोरासान पर (1507 ई०) शैबानी खां के द्वारा अधिकार कर लिये जाने के कारण बाबर के लिए मध्य एशिया के द्वार अंततः बंद हो गये और अब उसके सम्मुख काबुल के अलावा कोई विकल्प शेष न रहा क्योंकि काबुल में परिस्थितियां उसके लिए सबसे अधिक अनुकूल थी। इसके शासक उलुग बेग मिर्जा की मृत्यु पहले ही (1501 ई०) हो चुकी थी। बाबर ने 1504 ई० में काबुल को अपने अधीन कर लिया। लेकिन बाबर ने इस समय तक मध्य एशिया पर शासन करने के स्वप्न का त्याग नहीं किया था। शाह इस्माईल सफवी की मदद से वह 1511 ई० में समरकंद पर अधिकार करने में सफल हो गया। किंतु 1512 ई० में शाह इस्माइल के पराजित हो जाने एवं उजबेगों के उत्थान से बाबर के पास काबुल में अपनी स्थिति को मजबूत करने के अलावा कोई विकल्प शेष न रहा।

इस तरह मध्य एशिया की स्थिति ने बाबर पर दबाव डाला एवं उसको यह मानने के लिए बाध्य किया (1521 ई० के बाद) कि वह मध्य एशिया साम्राज्य स्थापित करने की आशा का परित्याग कर दे और भारत की ओर देखे। जैसा कि अबुल फजल ने लिखा है,भारत के संपन्न संसाधन एवं अफगानिस्तान की दुर्बल आर्थिक स्थिति भी बाबर के लिए आकर्षण का कारण रहे होंगे। सिकंदर लोदी की मृत्यु के पश्चात दिल्ली सल्तनत की अस्थिर राजनैतिक स्थिति ने बाबर को लोदी साम्राज्य में राजनैतिक असंतोष तथा अराजकता का विश्वास दिलाया। राणा सांगा एवं पंजाब के गवर्नर दौलत खां लोदी द्वारा बाबर को दिए गए निमंत्रण ने बाबर की लालसाओं को और बढ़ाया। संभवतः तैमूर की संपत्ति पर पैतृक अधिकार ने भी उसके आक्रमण की पृष्ठभूमि तैयार की। 1519 ई० में भीरा पर अधिकार करने के बाद बाबर ने इब्राहिम लोदी से पश्चिमी पंजाब की मांग की जो कभी उसके चाचा उलुग बेग मिर्जा के अधिकार में था। इस प्रकार बाबर के पास भारत आक्रमण के लिए कारण एवं अवसर दोनों थे।

बोध प्रश्न 1

1) बाबर के आक्रमण की पूर्व संध्या पर भारत की राजनैतिक स्थिति का विवेचन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

2) "यह मध्य एशिया की स्थिति ही थी जिसने बाबर को भारत की ओर देखने के लिए बाध्य किया।" टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

....

5.4 भारत में मुगल शासन की स्थापना

पानीपन के युद्ध (1526 ई०) से पूर्व बाबर ने भारत पर चार बार आक्रमण किये। ये भिड़न्त मुगल एवं लोदी सेनाओं के बीच शक्ति परीक्षण मात्र था। बाबर ने प्रथम विजय हिन्दुस्तान के प्रवेशद्वार भीरा (1519-20) पर प्राप्त की। फिर स्यालकोट (1520) तथा इसके बाद लाहौर (1524) पर अधिकार प्राप्त किया। निर्णायक मुकाबला इब्राहिम लोदी एवं बाबर की सेनाओं के मध्य ऐतिहासिक पानीपत के मैदान पर हुआ। कुछ घंटों में ही बाबर ने इस युद्ध में विजय प्राप्त कर ली। यह लड़ाई युद्धकला में बाबर की निपुणता को प्रदर्शित करती है। संख्या में कम होने के बावजूद उसका संगठन उच्च कोटि का था। इब्राहिम लोदी की सेना संख्या में बहुत अधिक होने के बावजूद (लगभग 100000 सैनिक तथा 500-1000 हाथी जबकि इसकी तुलना में बाबर के पास मात्र 12000 घुड़सवार थे) युद्ध के मैदान में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाई। बाबर ने सफलतापूर्वक रूमी (ऑटोमन) युद्ध पद्धति का इस्तेमाल किया (नीचे दिए गए चित्र को देखें) जैसे ही अफगान सेनाओं ने दाहिने
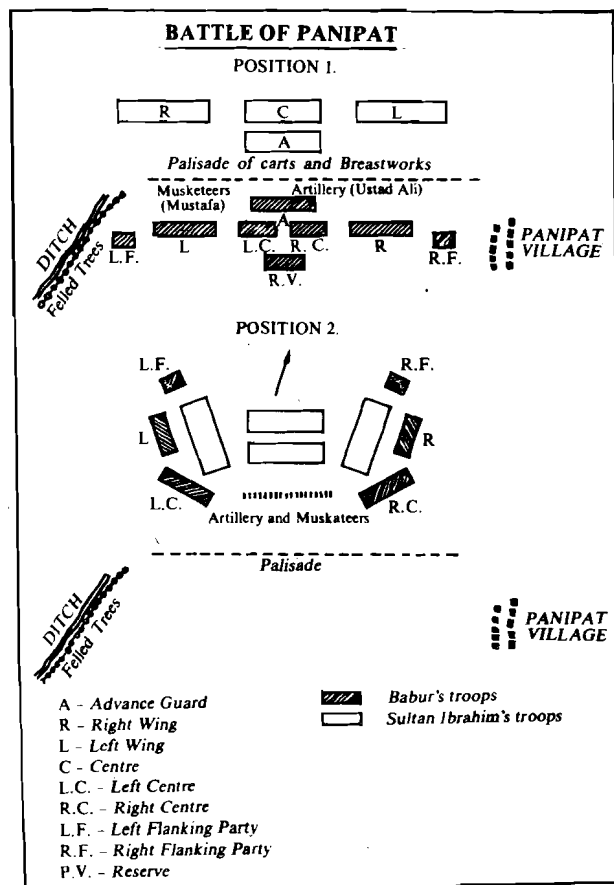
Source: Rushbrooke Williams, An Empire Builder of the 16th Century. pp 130-131.

भाग पर आक्रमण किया बाबर ने तुरंत उब्दुल अजीज के नेतृत्व में अपनी सुरक्षित सेनाओं को आगे बढ़ने का आदेश दिया। अफगान सेनायें संख्या में अधिक होने के बावजूद न आगे बढ़ सकी और न पीछे। उनपर दोनों ओर से आक्रमण किया गया। इससे अफगान सेना में पूर्णतः गड़बड़ी पैदा हो गई। बाबर ने इस स्थिति का भरपूर लाभ उठाया तथा उसके दायें एवं बायें दोनों भागों ने अफगान सेना पर शीघ्रता से पीछे से हमला किया। इसी के साथ तोप से आग के गोले बरसाये जाने प्रारंभ कर दिये गये। इससे संपूर्ण अफगान सेना तुरंत निष्क्रिय हो गई। बाबर के अनुसार इब्राहिम लोदी सहित अफगान सेना के 20000 सैनिक मारे गये। युद्ध में बाबर के तोपखाने ने नहीं अपितु उसकी सर्वोच्च युद्ध नीति तथा घोड़े पर सवार धनुर्धारियों ने निर्णायक भूमिका अदा की। इस तथ्य की पुष्टि स्वयं बाबर ने की है।

पानीपत के युद्ध में बाबर द्वारा अपनायी गई रूमी युद्ध प्रणाली

यद्यपि पानीपत के युद्ध से औपचारिक तौर पर भारत में मुगल शासन की स्थापना हो गई किंतु यह आगामी वर्षों में होने वाली लड़ाइयों में प्रथम मात्र थी। दृष्टांत के रूप में इस विजय को सुनिश्चित करने के लिए मेवाड़ के राणा सांगा पर तथा दिल्ली एवं आगरा तथा उसके आसपास के सरदारों पर विजय प्राप्त करना भी समान रूप से महत्वपूर्ण था। दूसरे महत्वपूर्ण प्रतिद्वन्द्वी पूर्वी भारत के अफ़गान राज्य थे। इसके अतिरिक्त बाबर के स्वयं के कुलीनों की समस्याएं भी बढ़ रही थी।

5.4.1 बाबर तथा राजपूत राज्य

जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं कि मेवाड़ का राणा सांगा एक महत्वपूर्ण शक्ति था। बाबर ने अपने संस्मरणों में राणा सांगा पर आरोप लगाया है कि इब्राहिम लोदी के विरुद्ध पानीपत के युद्ध में उसने उसका साथ न देकर अपना वायदा तोड़ा था। यहाँ इस विवाद में न जाते हुए कि सहायता का प्रस्ताव राणा की तरफ से अथवा बाबर की तरफ से आया था यह वास्तविकता है कि दोनों के मध्य इब्राहिम.लोदी के विरुद्ध समझौता करने के लिए अवश्य कुछ सहमति थी जिससे राणा सांगा पीछे हट गया था। राणा को आशा थी कि बाबर काबुल वापस लौट जाएगा और ऐसी स्थिति में राणा सांगा को अगर संपूर्ण हिन्दुस्तान पर नहीं तो कम से कम राजपूताना पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो जाएगी। बाबर के ठहर जाने के निर्णय से राणा सांगा की अभिलाषाओं को एक गहरा आघात लगा। बाबर भी इस तथ्य से भली-भांति परिचित था कि उसके लिए अपनी स्थिति को सुदृढ़ करना तब तक असंभव होगा जब तक कि वह राणा की शक्ति को नष्ट नहीं कर देता। राणा ने अफगान सरदारों की मदद से बाबर के विरुद्ध 'महासंघ' की स्थापना करने में सफलता प्राप्त कर ली। हसन खां मेवाती न केवल राणा के साथ मिल गया अपितु उसने 'महासंघ' के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका भी अदा की। इस समय (1527) बारी के हसन खां और हुसेन खां गुर्गअंदाज भी राणा से जा मिले। हुसैन खां नोहानी ने रापरी पर अधिकार कर लिया; रूस्तम खां ने कोल पर जबकि कुतुब खां ने चन्दावर पर अधिकार कर लिया। पूर्वी अफगानों पर भी इतना अधिक दबाव था कि सुल्तान मौहम्मद दुलदई को कन्नौज छोड़ना पड़ा और वह बाबर के साथ शामिल हो गया। बाबर के सेनापति अब्दुल अजीज तथा मुहिब अली की बयाना में पराजय और उनके द्वारा राजपूत सेना के शौर्य की प्रशंसा ने बाबर की सेना को निरुत्साहित किया। फरिश्ता तथा बदायुनी (अकबर के समकालीन) के अनुसार पराजय की भावना इतनी अधिक प्रबल थी कि युद्ध परिषद की बैठक में बहुमत से यह प्रस्ताव पारित किया गया कि बादशाह को पंजाब वापस लौट जाना चाहिए तथा अप्रत्याशित घटनाक्रम की प्रतीक्षा करनी चाहिए। यद्यपि **बाबरनामा** में इस प्रकार के प्रस्ताव के विषय में कुछ भी नहीं कहा गया है किंतु इस वक्तव्य से निराशा एवं भटकाव का स्पष्ट आभास मिलता है। लेकिन बाबर ने इस स्थिति पर नियंत्रण पाने के लिए अपने लोगों की धार्मिक भावनाओं की छूने वाला एक ओजस्वी भाषण दिया। बाबर ने सीकरी के पास खानवा गांव में अपनी स्थिति को घेरेबंदी द्वारा मजबूत किया। यहां पर भी उसने अपनी सेना को ऑटोमन विधि के आधार पर योजनाबद्ध एवं संगठित किया। इस बार उसने अपनी बायीं ओर एक तोपगाड़ी की सहायता ली।

अग्रिम भाग को सुरक्षित बनाने के लिए इस बार भी लकड़ी की गाड़ियों का प्रयोग किया किंतु इस बार इनको रस्सी के स्थान पर लोहे की जंजीरों से कसकर बांधा। इस बार लकड़ी की मजबूत तिपाइयों (tripods) का प्रयोग उनको एक-दूसरे से रस्सी से बांध कर किया गया। इससे न केवल सुरक्षा एवं तोपों को आराम से रखना संभव हुआ अपितु उनको पहियों की मदद से सरलता से आगे-पीछे भी घुमाया जा सकता था। इस युद्धकला को उस्ताद मुस्तफा तथा उस्ताद अली के नेतृत्व में पूरा करने में लगभग 20-25 दिन लगे। इस लड़ाई, 17 मार्च, 1527 ई०, में बाबर ने अपने तोपखाने का सफल प्रयोग किया। राणा सांगा गंभीर रूप से घायल हो गया और उसको आमेर के पास बसवा ले जाया गया। उसके अन्य सहायकों में महमूद खां लोदी भाग निकला किंतु हसन खां मेवाती मारा गया। राजपूतों को भारी नुकसान उठाना पड़ा। वास्तव में सेना की ऐसी कोई टुकड़ी न थी जिसका सेनापति न मारा गया हो। श्यामल दास **(वीर विनोद)** ने रायसेन के शासक सिलहदी पर विश्वासघात का आरोप लगाया है और इसे राणा की पराजय का मुख्य कारण माना है। किंतु वास्तव में राणा द्वारा तीन सप्ताह तक निष्क्रिय बने रहना अतार्किक था। इससे बाबर को स्वयं को शक्तिशाली बनाने और लड़ाई की पूर्ण तैयारी करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। बाबर की अनुशासनबद्ध सेना, गतिशील घुड़सवार एवं उसके तोपखाने ने युद्ध में निर्णायक भूमिका अदा की।

यद्यपि मेवाड़ के राजपूतों को खानवा के युद्ध में भारी आघात पहुंचा था। किंतु मालवा में मेदिनी राय अभी भी निश्चित रूप से शक्तिशाली था। हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं कि राणा सांगा ने मालवा के महमूद द्वितीय के मुख्य मंत्री मेदिनी राय को 1520 ई० में पराजित कर मालवा पर अपना प्रभाव कायम करने में सफलता प्राप्त की थी। 1528 में चन्देरी के युद्ध में यद्यपि राजपूतों ने अपने पूरे पराक्रम के साथ युद्ध किया किंतु बाबर ने मेदिनी राय पर सरलता से विजय प्राप्त कर ली। मेदिनी राय की पराजय के साथ ही राजपूताना में विद्रोही ताकतें पूर्णत: विखण्डित हो गयी। लेकिन अभी भी बाबर को अफगान समस्या का सामना करना शेष था क्योंकि महमूद खां लोदी पहले ही पूर्व की ओर भाग गया और यदि उसे स्वतंत्र छोड़ दिया जाता तो वह बाबर के लिए समस्या पैदा कर सकता था।

5.4.2 बाबर तथा अफगान सरदार

यद्यपि अफगानों को दिल्ली का समर्पण करना पड़ा फिर भी वे बिहार एवं जौनपुर के क्षेत्रों में काफी शक्तिशाली थे जहां पर सुल्तान मौहम्मद नोहानी के नेतृत्व में नोहानी अफगानों का प्रभुत्व था। किंतु चुनार, जौनपुर तथा अवध के अफगान नोहानी अफगानों के साथ मिलकर मुगल शक्ति का संयुक्त विरोध करने के लिये तैयार नहीं थे। बल्कि उन्होंने 1527 ई० में कायरतापूर्वक हुमायूं के सम्मुख समर्पण कर दिया। इसी बीच 1528 ई० में सुल्तान मौहम्मद नोहानी की मृत्यु हो गई जिसने नोहानियों को असंगठित कर दिया क्योंकि उसका पुत्र जलाल खां नाबालिग था। परंतु इस खाली स्थान को शीघ्र ही सिकंदर लोदी के पुत्र तथा इब्राहिम के भाई राजकुमार महमूद लोदी के पूर्व में आगमन ने भर दिया। इससे गैर नोहानी अफगान जो पहले नोहानियों के साथ सहयोग करने में थोड़ा हिचकिचा रहे थे महमूद लोदी के नेतृत्व को स्वीकार करने को तैयार हो गये। इसके अतिरिक्त बब्बन, बायजिद तथा फतह खां सरवानी जैसे नोहानी अफगान, जो जलाल के बंगाल चले जाने पर नेतृत्वविहीन हो गये थे, ने भी महमूद का स्वागत किया। यद्यपि बंगाल का शासक नुसरत शाह बाहय तौर पर बाबर के साथ मित्रता का दावा कर रहा था किंतु गुप्त रूप में उसने बाबर के विरुद्ध शत्रुतापूर्ण उपायों को अपनाया। उसके लिए बिहार के नोहानी राज्य का अस्तित्व अपने अधीनस्थ बिहार अधिकृत क्षेत्र की सुरक्षा के लिए मुगलों के विरुद्ध मध्यवर्ती राज्य के समान था।

बाबर इन घटनाक्रमों की अनदेखी नहीं कर सकता था। उसने अपनी सेनाओं को घाघरा नदी के समीप एकत्रित किया और 1529 ई० में नुसरत शाह की सेना पर विजय प्राप्त की। इस प्रकार अफगान-नुसरत गठबंधन टूट गया और नुसरत खां को उन अफगानों का समर्पण करना पड़ा जिन्होंने उसके राज्य में शरण ले रखी थी। इस घटनाक्रम से अफगानों का मनोबल पूर्णत: टूट गया। यद्यपि बब्बन एवं बायजिद ने अवध में मुगल शक्ति का

प्रतिरोध करने का प्रयास किया लेकिन जब उन पर मुगल दबाव पड़ा तो वे भी महमूद के पास भाग गये (1529 ई०)। इस प्रकार बाबर ने चार वर्षों के अंदर समस्त विरोधी शक्तियों को कुचलने में सफलता प्राप्त की और वह अब स्वयं को दिल्ली में सुदृढ़ करने की योजना बना सकता था। परंतु उसको शासन करने का उचित अवसर प्राप्त नहीं हो सका क्योंकि शीघ्र ही, 29 दिसंबर, 1530 को उसकी मृत्यु हो गई।

बाबर के शासन काल में मुगल साम्राज्य की स्थापना एक महत्वपूर्ण घटना थी। यद्यपि उसके द्वारा राजपूत एवं अफगान शक्ति का पूर्ण दमन नहीं किया जा सका था, यह कार्य उसके उत्तराधिकारियों के लिए छोड़ दिया गया, लेकिन पानीपत तथा खानवा की सफलतायें निर्णायक थीं जिन्होंने इस क्षेत्र में तत्कालीन शक्ति सतुलन को नष्ट किया और संभवतः वह अखिल भारतीय साम्राज्य की स्थापना की दिशा में एक कदम था।

बोध प्रश्न 2

1) खानवा के युद्ध के महत्व की विवेचना कीजिए।

....

....

....

....

....

....

2) बाबर के विरुद्ध नुसरत-अफगान गठबंधन पर एक टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

....

5.5 हुमायूं

हुमायूं के अधीन स्थिति काफी भिन्न थी। बाबर के विपरीत उसे कुलीनों का सम्मान एवं आदर प्राप्त न था। इससे भी खतरनाक स्थिति यह थी कि चगताई कुलीन वर्ग हुमायूं के विशेष पक्ष में नहीं था। साथ ही भारतीय कुलीन भी जिन्होंने बाबर की स्वायत्तता स्वीकार कर ली थी हुमायूं के सत्तारुढ़ होने पर उसका साथ छोड़ गये। तैमूर के वंशज मौहम्मद सुल्तान मिर्जा, मौहम्मद जमां तथा बाबर के बहनोई मौहम्मद मेंहदी ख्वाजा सिंहासन पर अपना अधिकार करना चाहते थे और विशेषकर बाबर के एक विशिष्ट कुलीन निजामुद्दीन अली खलीफा ने एक षड्यंत्र रचा किंतु वह असफल रहा। हुमायूं को शाही सत्ता तथा आधिपत्य को बनाये रखने के लिए पूर्व एवं पश्चिम में उन अफगानों के विरुद्ध संघर्ष करना था जिनके पास व्यापक सामाजिक आधार था। लेकिन हुमायूं के लिए सबसे बड़ा खतरा उसके स्वयं के भाई कामरान मिर्जा से था। साम्राज्य में सत्ता के दो केन्द्रों-केन्द्र में हुमायूं और अफगानिस्तान तथा पंजाब पर मिर्जा कामरान की स्वायत्तता स्थापित हो जाने से स्थिति और भी बिगड़ गई। हुमायूं ने पहले पश्चिम के अफगानों से निपटने का निर्णय किया।

5.5.1 बहादुर शाह तथा हुमायूं

परिस्थितियों के कारणवश बहादुरशाह तथा हुमायूं के संबंधों के बीच एक विचित्र विरोधाभास था। बहादुर शाह ने प्रारंभ में (जनवरी 1531 से 1533 के मध्य तक) हुमायूं

मारा गया

BABUR'S EMPIRE
Empire boundary
UZBEKS
BALKH
BADAKHSHAN
Herat
SAFAVIDS
Ghazni
Qandahar
KASHMIR
Bhira
Sialkot
Kalanaur
LAHORE
Dipalpur
Sirhind
Panipat
Hisar Firuza
DELHI
Sambhal
Badaun
Tijara
Kol
Alwar
Shahabad
Khairabad
Sikri
AGRA
Bayana
Ranthambore
Saran
Tirhut
BENGAL
GAUR
Chunar
Bihar
Chanderi
SIND
TATTA
MEWAR
MALWA
GUJARAT
Satgaon
ARABIAN SEA
BAY OF BENGAL

को मित्रता एव वफादारी का आश्वासन दिया। लेकिन ठीक उसी समय उसने मुगल सीमाओं से लगे क्षेत्र में अपने प्रभाव का भी प्रसार करने का प्रयत्न किया। बहादुर शाह का प्रथम शिकार मालवा था। बहादुर शाह को पहले से ही मालवा पर मुगलों की नीयत का आभास हो गया था। उसको डर था कि यदि इस मध्यवर्ती राज्य पर अधिकार किये बगैर छोड़ दिया गया तो मुगल शासक इसको विजित करने का प्रयास कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त गुजरात की ओर जाने वाले सभी व्यापारिक मार्ग मालवा से होकर गुजरते थे। यह अनाज उत्पादन की दृष्टि से भी एक उपजाऊ एवं सम्पन्न क्षेत्र था और गुजरात अनाज की आपूर्ति के लिए मालवा पर निर्भर था। 1530 ई. के बाद बहादुरशाह ने मालवा पर सैनिक दबाव डालना प्रारंभ कर दिया। अन्ततः जनवरी 1531 में बहादुर शाह ने इस पर अधिकार कर लिया। इस घटना के तुरंत बाद बहादुर शाह ने हुमायूं के विरोधियों– बिहार में शेरशाह (1531-32) तथा बंगाल में नुसरत शाह (अगस्त-सितंबर 1532), के साथ गठबंधन की प्रक्रिया शुरू कर दी। नुसरत शाह ने भी ख्वाजासरा मालिक के अधीन (अगस्त-सितंबर1532) एक प्रतिनिधि मंडल गुजरात भेजा जिसका बहादुरशाह ने पूर्ण स्वागत किया। इसके अतिरिक्त उत्तर तथा पूर्व के अनेक हताश अफगान भी अपने खोये सम्मान को 'पुनःस्थापित' करने के लिए मुगलों को बाहर निकालने के प्रयास में बहादुर शाह के साथ शामिल हो गये। बहलोल लोदी का पुत्र सुल्तान अलाउद्दीन लोदी तथा उसके पुत्र फतह खां एवं तातार खां, ग्वालियर के राजा विक्रमाजीत का भतीजा राय नरसिंह (1529) तथा कालपी का आलम खां लोदी ये सभी नेतृत्व के लिए बहादुर शाह की ओर देखने लगे और उन्होंने उसे मुगलों के विरुद्ध मदद देने की पेशकश की। पूर्व के अफगान बब्बन खां लोदी (शाहू खैल), मलिक रूपचंद, दत्तू सरवानी तथा मारुफ फरमूली भी बहादुर शाह के साथ मिल गये।

इन घटनाक्रमों की हुमायूं द्वारा अवहेलना करने पर उसे भयंकर परिणामों का सामना करना पड़ सकता था। हुमायूं पर पश्चिम एवं पूर्व की ओर से संयुक्त आक्रमण की स्थिति और भी भयंकर सिद्ध होती। इस दौरान बहादुर शाह का विजय अभियान बगैर किसी रुकावट के जारी था। उसने भीलसा, रायसेन, उज्जैन तथा गगरौन पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार वह मुगलों को ग्वालियर, कालिंजर, बयाना एवं आगरा से दूर रख सका। जिस समय बहादुरशाह मालवा तथा राजपूताना की ओर क्षेत्रीय प्रसार में व्यस्त था उस समय हुमायूं चुनार पर अधिकार करने में उलझा हुआ था। इस घटनाक्रम ने हुमायूं को आगरा वापस लौटने के लिए बाध्य किया (1532-33)। लेकिन बहादुरशाह प्रकट तौर पर मुगलों के साथ किसी भी प्रकार के संघर्ष को टालना चाहता था। उसने तत्काल खुरासान खां (1533-34) के अधीन एक प्रतिनिधि मंडल हुमायूं के पास भेजा। हुमायूं ने मांग की कि बहादुरशाह किसी भी मुगल विद्रोही विशेषकर मौहम्मद जमां मिर्जा को शरण नहीं देगा। इसी के साथ हुमायूं बहादुर शाह के गुजरात अधीनस्थ क्षेत्रों को चुनौती न देने के लिए सहमत हो गया और बहादुर शाह ने भी माण्डू छोड़ने का वायदा किया। तत्पश्चात बहादुर शाह पुर्तगालियों द्वारा उत्पन्न खतरे का दमन करने में (सितंबर-दिसंबर 1533) तथा हुमायूं पूर्व में अफगान समस्या का समाधान करने में व्यस्त रहा।

नये घटनाचक्र का परिणाम गुजरात पर 1535 ई० में हुमायूं के आक्रमण के रूप में निकला। जनवरी 1534 में बहादुर शाह ने मौहम्मद जमां मिर्जा को शरण दी और चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया। चित्तौड़ बहादुर शाह के लिए इसलिए महत्वपूर्ण था क्योंकि इससे उसे राजपूताना में एक मजबूत आधार प्राप्त हो जाता जिससे वह सफलता पूर्वक अजमेर, नागौर तथा रणथम्भौर की ओर प्रसार कर सकता था। लेकिन हुमायूं ने इस बिन्दु पर बहादुर शाह को चित्तौड़ विजय करने से रोकने के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किया। आगरा से कालपी की ओर हुमायूं का प्रस्थान भी काफी धीमा था। ठीक इसी प्रकार उसने चित्तौड़ पहुंचने के लिए भी लंबे मार्ग को चुना। ऐसा प्रतीत होता है कि हुमायूं को बहादुर शाह को चित्तौड़ पर अधिकार करने से रोकने में कोई विशेष दिलचस्पी न थी। बहादुर शाह हुमायूं के अवरोध खड़ा करने से पूर्व ही माण्डू पहुंचने के लिए चिंतित था। लेकिन हुमायूं काफी पहले माण्डू पहुंचने में सफल रहा। चित्तौड़ से गुजरात को वापस लौटने का एक मात्र मार्ग माण्डू से था और इस पर पहले ही हुमायूं द्वारा अधिकार कर लिया गया था। हुमायूं ने बहादुर शाह की सेना की सभी ओर से घेरेबंदी कर उसकी आपूर्ति रोक दी। एक माह के अंदर ही, जब कोई आशा शेष न रही, गुजरात की सेना ने मुगलों को रोकने

के लिए उनके विरुद्ध प्रयोग करने वाले अपने सर्वश्रेष्ठ तोपखानों को स्वयं ही नष्ट करना पड़ा। बहादुर शाह माण्डू से चम्पानेर, अहमदाबाद होता हुआ कैम्बे (खम्बायत) की ओर भाग गया और काठियावाड़ को पार कर दयु पहुंचा। मुगलों ने उसका पीछा किया। लेकिन एक बार फिर उन्होंने बहादुर शाह को गिरफ्तार करने या उसकी हत्या करने के लिए कोई उत्सुकता नहीं दिखांई। ऐसा लगता है कि हुमायूं का मुख्य उद्देश्य मात्र गुजरात की शक्ति को नष्ट करना था। जिस समय चम्पानेर में मुगल सेनाओं ने बहादुर शाह को पहचान लिया उन्होंने उसको गिरफ्तार नहीं किया। लेकिन आगरा में लंबे समय से हुमायूं की अनुपस्थिति के कारण दोआब एवं आगरा में विद्रोह भड़क उठे। अतः उसे शीघ्र ही माण्डू छोड़ना पड़ा तथा उसने आगरा की ओर तेजी से कूच किया। उधर गुजरात तथा मालवा में मुगलों द्वारा स्थानीय जनता के साथ किये गये व्यवहार के कारण स्वदेशी-विद्रोह प्रारंभ हो गये। मुगल सेनाओं ने लोगों को लूटा एवं उनकी हत्या की। इसके फलस्वरूप जैसे ही हुमायूं ने माण्डू छोड़ा वैसे ही लोगों ने बहादुर शाह का दयू से वापस लौटने पर स्वागत किया। बहादुर शाह ने अवसर का लाभ उठाते हुए मुगलों को अहमदाबाद में पराजित कर दिया। किंतु इसी बीच बहादुर शाह को पुर्तगालियों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए दयू वापस लौटना पड़ा लेकिन इस बार पुर्तगाली अपने अभियान में सफल रहे और उन्होंने विश्वासघात से बहादुर शाह की हत्या कर दी (17 फरवरी 1937)। इस्से सभी जगहों पर संशय उत्पन्न हो गया। अफगानों के सम्मुख कोई विकल्प शेष न रहा और वे नेतृत्व के लिए शेरशाह की ओर देखने लगे।

5.5.2 पूर्वी अफगान तथा हुमायूं

नवम्बर 1531 में हुमायूं के हाथों पराजित हो जाने पर (चुनार पर अधिकार) अफगान कुलीन गुजरात की ओर भाग गये थे। इससे पूर्व में राजनैतिक रिक्तता उत्पन्न हो गई जिसने शेरशाह को अपनी सत्ता को सुदृढ़ीकरण करने का सुअवसर प्रदान किया।

1530-35 के वर्ष शेरशाह के लिए निर्णायक साबित हुए। पूर्व में अपनी स्थिति को सुदृढ़ करते समय उसको बंगाल एवं उन अफगान कुलीनों का सामना करना पड़ा जिनको बंगाल के शासक द्वारा आश्रय प्रदान किया गया था। दूसरी ओर वह मुगलों के साथ सीधा संघर्ष करने की स्थिति में भी नहीं था। भाग्यवश परिस्थितियों में शेरशाह के अनुकूल परिवर्तन हुआ। हुमायूं ने गुजरात के शासक बहादुर शाह को गंभीर खतरा मानकर सर्वप्रथम उससे निपटने का निर्णय किया। इन वर्षों के दौरान शेरशाह को अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया गया।

शेरशाह को बगाल शासकों के दो हमलों का सामना करना पड़ा। प्रथम आक्रमण मुंगेर के **मुक्ती** (गवर्नर) कुतुब खां के नेतृत्व में 1532-33 ई० में सुल्तान नुसरत शाह के शासन काल में हुआ। दूसरा सुल्तान महमूद शाह के शासन काल में इब्राहिम खां के नेतृत्व में 1534 ई० में किया गया। लेकिन दोनों अवसरों पर बंगाल की सेना को पराजय का सामना करना पड़ा। इन सफलताओं ने बंगाल सेनाओं की कमजोरियों को पूर्णतः उजागर कर दिया। इससे शेरशाह की प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई। पूर्व के वे अफगान जो पहले उसको छोड़कर चले गये थे अब उसकी अधीनता स्वीकार करने के लिए तैयार हो गये। इसके अतिरिक्त हुमायूं द्वारा बहादुर शाह की शक्ति नष्ट कर दिये जाने एवं बहादुर शाह की मृत्यु हो जाने के कारण अफगानों के पास मुगलों के विरुद्ध शेरशाह का साथ देने के अलावा कोई विकल्प शेष न रहा था।

अब शेरशाह स्वयं को अफगानों का सार्वभौमिक नेता सिद्ध करना चाहता था इस समय 1535 ई० में उसने स्वयं बंगाल के शासक पर आक्रमण किया तथा सूरजगढ़ के युद्ध में बंगाल की सेना को पराजित कर दिया। युद्ध के बाद एक शांति समझौते के अनुसार शेरशाह को जब कभी भी आवश्यकता होगी बंगाल का सुल्तान महमूद शाह उसको हाथियों की आपूर्ति एवं वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए सहमत हो गया। इस शानदार सफलता के बाद शेरशाह ने मुगलों के पूर्वी क्षेत्र गोरखपुर एवं बनारस पर आक्रमण किया जो हुमायूं के लिए चेतावनी थी। हुमायूं ने पूर्वी क्षेत्र की निगरानी करने के लिए हिन्दू बेग को जौनपुर का गवर्नर (**हाकिम**) नियुक्त किया। लेकिन शेरशाह ने एक

ओर सावधानी पूर्वक हिन्दू बेग को मुगलों के प्रति अपनी निष्ठा का आश्वासन दिया दूसरी ओर इस समय का सदुपयोग अपनी सेना को मुगलों पर कड़ा प्रहार करने के लिए मजबूत करने में लगाया। जैसे ही शेरशाह की तैयारियां पूर्ण हो गई उसने हिंदू बेग को एक धमकी भरा पत्र लिखा। ठीक उसी समय उसने बंगाल पर (1537 ई०) दूसरा आक्रमण किया। हिन्दू बेग ने शेरशाह के इस व्यवहार से नाराज हो उसके शत्रुता पूर्ण इरादों की सूचना हुमायूं को दी। हुमायूं के अफगान कुलीनों ने उसे सुझाव दिया कि वह शेरशाह को बंगाल पर अधिकार करने से रोके जबकि उसके मुगल कुलीनों का विचार था कि उसको प्रथम चुनार पर अधिकार करना चाहिए तथा उसे आधार बनाकर पूर्व में अपनी कार्यवाहियों का संचालन करे। आगरा के साथ सम्पर्क रखने के लिए द्वितीय विकल्प महत्वपूर्ण था लेकिन रूमी खां को चुनार पर अधिकार करने में छः माह का लंबा समय लगा। इतिहासकार इसको एक "भयंकर भूल" मानते हैं क्योंकि हुमायूं को इसका मूल्य अपना साम्राज्य खोकर चुकाना पड़ा। यद्यपि चुनार को अफगानो के हाथों में स्वतंत्र छोड़ना जहां एक ओर मूर्खतापूर्ण कार्य था वहीं शेरशाह को बंगाल में स्वतंत्र एवं बगैर किसी नियंत्रण के छोड़ना भी गलत था। शेरशाह ने इस समय का उपयोग बंगाल की राजधानी गौड़ पर अधिकार (अप्रैल 1538 ई०) करने के लिए किया। इस स्थिति में हुमायूं ने शेरशाह से बंगाल एवं रोहतासगढ़ की मांग की किंतु शेरशाह बंगाल देने के लिए तैयार न था अतः वार्तालाप असफल हो गया। अंततः हुमायूं ने शेरशाह की शक्ति को समाप्त करने का निर्णय किया लेकिन वह स्वयं को बंगाल की राजनीति में फंसाना नहीं चाहता था। फिर भी परिस्थितियों ने उसको ऐसा करने के लिए बाध्य किया। शेरशाह ने चतुराई से स्वयं को बंगाल से अलग कर लिया और सितंबर 1538 में हुमायूं को बगैर किसी बाधा के बंगाल तक पहुंचने दिया।

हुमायूं को बंगाल में चार माह तक वहां पर व्याप्त अराजकता को ठीक करने के लिए ठहरना पड़ा। इसी बीच शेरशाह ने आगरा के मार्गों पर नियंत्रण करने में सफलता प्राप्त की और इस प्रकार हुमायूं के लिए आगरा के साथ संपर्क मुश्किल कर दिया। हिन्दाल मिर्जा ने हुमायूं की चिंताओं को उस समय और बढ़ा दिया जबकि उसे सेना के लिए आपूर्ति की व्यवस्था करने के लिए भेजा गया था किंतु उसने स्वयं को एक स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया। हुमायूं ने तुरंत चुनार की ओर प्रस्थान किया और वह मार्च 1538 को चौसा पहुंचा। उसने कर्मनासा नदी के पश्चिमी किनारे पर अपनी सेना का पड़ाव डाल दिया। इस समय भी हुमायूं का स्थिति पर पूर्ण नियंत्रण था। उसका अग्रिम भाग नदी द्वारा सुरक्षित था और पीछे के हिस्से में चुनार स्थित था जिस पर अभी भी उसकी सेना का नियंत्रण था। शेरशाह ने भी समझौता करने की इच्छा व्यक्त की। लेकिन इस स्थिति में हुमायूं ने नदी पार कर स्वयं को अनावश्यक खतरे में डाल दिया। शेरशाह हुमायूं की सामग्री, हथियारों एवं परिवहन की कमी से भली-भांति परिचित था। अतः उसने स्थिति से लाभ उठाने में कोई समय नष्ट नहीं किया। उसने समझौते की शर्तों को पूरा करने का बहाना करते हुए मुगल सेना पर अचानक आक्रमण कर दिया। मुगल खेमे में भय व्याप्त हो गया। बड़ी संख्या में मुगल सेना नष्ट हो गयी। हुमायूं एवं असकरी मिर्जा ने भागने में सफलता प्राप्त की। हुमायूं मानिकपुर तथा कालपी के रास्ते आगरा पहुंचा (जुलाई 1539)। गहोरा के राजा वीरभान ने उनके बचाव में काफी मदद की। कामरान मिर्जा ने हुमायूं का नष्ट हुई सेना के साथ आगरा वापस लौटने पर स्वागत किया। जबकि शेरशाह ने अपनी विजय से पुलकित होकर स्वयं को स्वतंत्र राजा घोषित कर दिया। इन परिस्थितियों में अंतिम संघर्ष अपरिहार्य था। हुमायूं को गंगा के तट पर 1540 में हुए कन्नौज के युद्ध में बुरी तरह से पराजय का सामना करना पड़ा। इस हार ने भारत में "दूसरे अफगान साम्राज्य" की स्थापना के मार्ग को प्रशस्त किया।

शेरशाह के विरुद्ध हुमायूं की असफलता के बहुत से कारण थे। कुछ मुख्य इस प्रकार हैं।

I) भाइयों का वैमनस्य। उसने भाइयों के साथ कई अवसरों पर अत्यधिक दयालुतापूर्वक व्यवहार किया।

II) कई परिस्थितियों में जबकि उसे तीव्रता के साथ कार्यवाही करनी चाहिए थी उसने सुस्ती दिखायी। इसे उसके गुजरात एवं बंगाल अभियानों के दौरान देखा जा सकता है।

III) वह "निष्ठुर भाग्य" का भी शिकार हुआ। उदाहरण के लिए, बंगाल के महमूद शाह ने उसे अनावश्यक बंगाल की राजनीति में उलझाये रखा। जिससे शेरशाह को अपनी स्थिति सुदृढ़ करने का अवसर प्राप्त हुआ।

IV) निरंतर युद्धों को जारी रखने के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों की भी हुमायूं के पास कमी थी। जिस समय वह बंगाल में था वह निःसहाय था एवं उसके पास धन तथा आपूर्ति दोनों की कमी थी (1539)।

V) इसके अतिरिक्त शेरशाह के पास साहस, अनुभव तथा संगठनात्मक योग्यता थी। वः राजनैतिक अवसरों से लाभ उठाने में निपुण था। हुमायूं का इन गुणों में उससे कोई मुकाबला न था।

1) बहादुर शाह के साथ हुमायूं के संघर्ष की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

....
....
....
....
....
....

2) शेरशाह के विरुद्ध हुमायूं की असफलता के कारणों को बताइये।

....
....
....
....
....
....

3) निम्नलिखित को मिलाइये :

(i)	पानीपत का प्रथम युद्ध	1528
(ii)	चौसा का युद्ध	1527
(iii)	कन्नौज का युद्ध	1539
(iv)	खानवा का युद्ध	1526
(v)	चन्देरी का युद्ध	1540

5.5.3 हुमायूं एवं उसके भाई

अपने पिता बाबर की मृत्यु के पश्चात् हुमायूं ने अपने साम्राज्य को अपने चार भाईयों के बीच विभाजित कर दिया। मेवात हिन्दाल को, सम्भल असकरी को तथा पंजाब, काबुल तथा कन्धार कामरान को दिया। साम्राज्य का हुमायूं द्वारा किया गया विभाजन उसके लिए हानिकारक था क्योंकि इससे उसके पास सीमित संसाधन शेष रहे। उसके उदारतापूर्ण व्यवहार के बावजूद जब कभी भी उसको आवश्यकता हुई उसके भाइयों ने उसकी मदद नहीं की। अहमदाबाद पर बहादुरशाह के आक्रमण के समय उसका भाई असकरी मिर्जा जिसे हुमायूं ने गुजरात का गवर्नर नियुक्त किया था उत्पन्न समस्या का हल न कर सका। फलस्वरूप हुमायूं को मालवा खोना पड़ा (1537)। कन्नौज के युद्ध में शेरशाह द्वारा पराजित होने के पश्चात जब हुमायूं को सहायता की अति आवश्यकता थी उस समय असकारी मिर्जा ने इस निर्णायक अवसर पर उसका साथ छोड़कर कामरान के साथ कन्धार

की ओर प्रस्थान किया। परंतु हिन्दाल मिर्जा हुमायूं के प्रति वफादार बना रहा। अंततः वह 1551 ई० में उसके लिए युद्ध करता हुआ मारा गया।

हुमायूं को सबसे बड़ा खतरा कामरान मिर्जा से था क्योंकि उसने अफगानिस्तान तथा पंजाब में लगभग एक स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया था। इस प्रकार सत्ता के दो केन्द्र बन गये एक काबुल में और दूसरा आगरा में। इस स्थिति ने एक केन्द्रीकृत राज्य के उदय में बाधा उत्पन्न की। उस प्रथम संकट के समय (1538-40 ई०), जिसका सामना मुगलों को करना पड़ा, उत्पन्न राजनीतिक अस्थिरता इसका प्रमाण थी। यद्यपि कामरान मिर्जा हुमायूं के प्रति प्रारंभिक वर्षों में वफादार बना रहा और एक बार हिन्दाल मिर्जा द्वारा उत्पन्न समस्या का समाधान करने के लिए वह दिल्ली के गवर्नर यादगार नासिर मिर्जा के आमंत्रण पर दिल्ली भी आया (जून 1539)। किंतु दोनों भाई हिन्दाल तथा कामरान चौसा के युद्ध में हुमायूं की सहायता करने के स्थान पर दूर से ही स्थिति का आकलन करते रहे। यदि उन्होंने समय पर हुमायूं की भरपूर सहायता की होती तो संभवतः हुमायूं शेरशाह को पराजित कर पाता।

ऐसा प्रतीत होता है कि कामरान अफगानों के विरुद्ध एक संयुक्त मोर्चा बनाने की अपेक्षा अपने क्षेत्र की सुरक्षा बनाये रखने में अधिक रुचि रखता था। हुमायूं के शेरशाह के साथ अंतिम युद्ध (1540 ई०) से पूर्व ही कामरान मिर्जा ने लाहौर में हुमायूं की सेवा में संपूर्ण सेना भेजने के स्थान पर मात्र 3000 सिपाहियों को ही भेजा। 1540 में हुमायूं के शेरशाह के हाथों पराजित हो जाने के बाद कामरान ने काजी अब्दुल्लाह के माध्यम से शेरशाह को पंजाब को सीमा के रूप में स्वीकार करने का प्रस्ताव भेजा। शेरशाह ने इससे अनुमान लगाया कि दोनों भाइयों के मध्य एकता का अभाव है अतः मौके का फायदा उठाकर उसने उसे सिंधु नदी को सीमा मानने पर मजबूर किया। कामरान का विचार था कि उसको अपने भाई हुमायूं की अक्षमता के कारण शेरशाह को पंजाब देना पड़ा और वह काबुल तथा कन्धार को बचाने के लिए अधिक चिंतित हो गया। 1545-1553 के वर्षों में हुमायूं सतत् कामरान मिर्जा से संघर्षरत रहा (देखें भाग 5.7)। परंतु इन सब के बावजूद हुमायूं की असफलता का पूरा उत्तरदायित्व उसके भाइयों पर नहीं थोपा जा सकता। फिर भी यदि हुमायूं को अपने भाइयों का भरपूर समर्थन प्राप्त हुआ होता तो साम्राज्य को बचाया जा सकता था।

5.6 भारत में द्वितीय अफगान साम्राज्य की स्थापना: 1540-1555 ई०

मुगल सम्राट को पराजित करने के पश्चात शेरशाह ने स्वयं को शासक घोषित कर दिया तथा दूसरे अफगान साम्राज्य को संगठित करना शुरू किया। अफगान शासन के पंद्रह वर्ष (1540-1555 ई० तक) मुगल साम्राज्य के इतिहास में अंतराल के वर्ष थे। लेकिन इसके बावजूद भी यह समय प्रशासनिक प्रयोगों एवं पुनर्गठन की दृष्टि से महत्वपूर्ण था। शेरशाह के अधीन सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया के विषय में खंड-4 एवं खंड-5 में विवरण किया जाएगा। शेरशाह अपने संक्षिप्त शासन काल (1540-1545 ई० तक) में नये साम्राज्य को एकीकृत बनाये रखने के लिए युद्धरत रहा। यहां हम इस काल के दौरान शेरशाह के संघर्षों का संक्षिप्त विवरण करेंगे।

शेरशाह का प्रथम संघर्ष धोक्करों (सिंधु तथा झेलम के बीच बसे उत्तर-पश्चिम सीमा के निवासी) के साथ हुआ। लेकिन शेरशाह को अपने इस अभियान में पूर्ण सफलता प्राप्त न हो पाई। धोक्करों ने कड़ा संघर्ष किया। बंगाल का गर्वनर खिज्र खां भी स्वतंत्र होने के लिए प्रयत्न करने लगा। जिसके कारण उसे पंजाब से पीछे हटना पड़ा और उसने 1541 में बंगाल की ओर प्रस्थान किया। जहां उसने खिज्र खां को अपदस्थ कर दिया। शेरशाह का अगला लक्ष्य मालवा था जहां कादिर शाह उसके विरुद्ध षड्यंत्ररत था। मार्ग में उसने अब्दुल कासिम को हराकर ग्वालियर पर अधिकार कर लिया। कादिर शाह ने भी आत्म समर्पण कर दिया और उसे 1542 ई० में गिरफ्तार कर लिया गया। राजपूत समस्या का समाधान करने के लिए सर्वप्रथम उसने रायसेन (1543 ई०) पर अधिकार कर लिया। रायसेन का राजा पूरनमल यद्यपि शेरशाह की संप्रभुता को स्वीकार करने के लिए तैयार था लेकिन शेरशाह ने आक्रमण कर दिया जिससेपूरनमलकई अन्य सिपाहियों के साथ युद्ध में मारा गया।

1543 ई० में मुल्तान प्रांत को भी विजित कर लिया गया। रायसेन के युद्ध में राजपूतों की पराजय के बावजूद मेवाड़ का राजा मालदेव अभी भी काफी शक्तिशाली था। उसने अपने प्रभुत्व का प्रसार साम्भर, नागौर, बीकानेर, अजमेर तथा बेदनार तक कर दिया था। शेरशाह ने उसकी ओर प्रस्थान किया और 1544 में अजमेर, पाली तथा माऊंट आबू पर अधिकार कर लिया। चित्तौड़ के शासक उदय सिंह ने भी बिना किसी विशेष विरोध के चित्तौड़ शेरशाह को सौंप दिया। इस प्रकार लगभग संपूर्ण राजपूताना उसके अधीन हो गया। शेरशाह को कालिंजर के अजेय दुर्ग पर भी अधिकार करने में सफलता प्राप्त हुई। लेकिन जिस समय वह इस दुर्ग पर अपना अधिकार करने का प्रयत्न कर रहा था शेरशाह एक विस्फोट में घायल हो गया और इस घटना के बाद शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई (22 मई, 1545 ई०)। इस प्रकार शेरशाह के शानदार जीवन का अंत हो गया।

शेरशाह के पुत्र इस्लाम शाह (1545-1553 ई०) ने पैतृक साम्राज्य को बनाये रखा किंतु वह साम्राज्य का और अधिक विस्तार तथा सुदृढ़ीकरण न कर सका। उसका अधिकतर समय उन आंतरिक विद्रोहों को दबाने में ही व्यतीत हो गया जिनका नेतृत्व उसका भाई आदिल शाह, आजम हुमायूं तथा खव्वास खां के साथ मिलकर कर रहा था। इसके अतिरिक्त उसका अफगान कुलीनों, विशेषकर नियाजी अफगानों के साथ अपमानजनक व्यवहार से उनमें उसके विरुद्ध विरोध को बढ़ावा मिला। जिसका प्रभाव उसके पुत्र एवं उत्तराधिकारियों को झेलना पड़ा इस्लाम शाह द्वारा अपने पुत्र को सरलता से उत्तराधिकारी बनाने के लिए मार्ग को प्रशस्त करने के प्रयत्नों के बावजूद यह नवीन अफगान साम्राज्य आंतरिक कलहों की चपेट में आ गया जो हुमायूं के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ। इस्लाम शाह की मृत्यु के तुरंत बाद मुबारिज खां ने इस्लाम शाह के पुत्र फिरोज की हत्या कर दी और आदिल शाह के नाम से स्वयं सत्तारुढ़ हो गया। विद्रोह एवं षडयंत्र संपूर्ण राज्य में व्याप्त हो गये अंततः साम्राज्य पांच भागों में विभाजित हो गया (अहमद खां सूर पंजाब में; इब्राहीम शाह सम्भल तथा दोआब में; आदिल शाह चुनार तथा बिहार में; मालवा में बाज बहादुर और सिकन्दर शाह का आगरा तथा दिल्ली पर अधिकार हो गया)। इन परिस्थितियों ने हुमायूं को पुनः आक्रमण करने के लिए आदर्श पृष्ठभूमि प्रदान की।

5.7 भारत में मुगल शासन की पुनःस्थापना

कन्नौज के युद्ध में हुमायूं की पराजय के बाद असकरी मिर्जा तथा कामरान उत्तर-पश्चिम में चले गये किंतु हिन्दाल तथा यादगार नासिर मिर्जा ने हुमायूं का साथ देने का निर्णय किया। हुमायूं ने सर्वप्रथम सिंध में अपना भाग्य आजमाने का प्रयत्न किया लेकिन यहां हिन्दाल मिर्जा ने भी उसका साथ छोड़ दिया और वह कामरान के निमंत्रण पर कन्धार चला गया। सिंध के शासक शाह हुसैन अर्धुन ने यादगार नासिर मिर्जा के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर उसको भी अपने साथ मिला लिया। इस बीच हुमायूं सीवान पर अधिकार करने में असफल रहा। इन सभी घटनाक्रमों से निराश होकर हुमायूं ने अकेले ही अपने भाग्य की परीक्षा राजपूताना में लेने का निर्णय किया। मारवाड़ के शासक मालदेव ने हुमायूं को आमंत्रित किया (जुलाई 1542 ई०)। लेकिन शेरशाह ने मालदेव पर हुमायूं को उसे देने के लिए दबाव डाला। हुमायूं भयवश भाग गया (अगस्त, 1542 ई०)। जहां अन्य राजपूत शासक राणा बीरसाल द्वारा उसका स्वागत किया गया। हुमायूं ने राणा बीरसाल की मदद से एक बार फिर सिंध में अपने भाग्य की परीक्षा लेने की ठानी किंतु वह इस बार भी असफल रहा। अब उसने गजनी के मार्ग से ईरान की ओर प्रस्थान किया। ईरान के शासक शाह तहमस्प द्वारा उसका गर्मजोशी के साथ स्वागत किया गया (1544 ई०)। ईरान के शाह ने हुमायूं से वायदा किया कि अगर वह उसको कन्धार दे देगा तब वह उसकी कन्धार, काबुल एवं गजनी पर अधिकार करने में सहायता करेगा। हुमायूं इसके लिए तैयार हो गया। कन्धार उस समय अस्करी मिर्जा के अधीन था। हुमायूं ने शीघ्र ही कन्धार पर अधिकार कर लिया और उसे शाह के हवाले कर दिया। लेकिन दोनों के मध्य गलत फहमियां प्रारम्भ हो गई क्योंकि ईरानियों ने काबुल एवं गजनी पर अधिकार करने में हुमायूं की मदद करने में जल्दबाजी नहीं दिखाई। इससे बाध्य होकर हुमायूं ने ईरानियों से

कन्धार छीन लिया (1545 ई०)। कन्धार में हुमायूं की सफलता ने कई कुलीनों को, विशेषकर हिन्दाल तथा यादगार नासिर मिर्जा को पुनः उसके पक्ष में कर दिया। इस घटनाक्रम से भयभीत होकर कामरान काबुल से गजनी भाग गया और वहां से सिंध। इसके कारण हुमायूं सरलता से काबुल में (नवम्बर, 1545 ई०) प्रवेश कर सका। 1545 ई० से 1553 के मध्य हुमायूं ज्यादातर अपने भाई कामरान की शक्ति का दमन करने में ही व्यस्त रहा। लेकिन कामरान भी हुमायूं को लगातार संकट में डाले रहा। इस संघर्ष में ही उसका भाई हिन्दाल मिर्जा मारा गया (1551 ई०)।इससे उत्तेजित होकर हुमायूं ने कामरान पर अंतिम प्रहार करने का निर्णय लिया। कामरान ने इस संघर्ष में इस्लाम शाह से सहायता प्राप्त करने का प्रयास किया किंतु वह सफल न हो सका। जिस समय मिर्जा कामरान एक स्थान से दूसरे स्थान अपने बचाव में दौड़ रहा था उसको धोक्कर सरदार सुल्तान आदम ने गिरफ्तार कर हुमायूं के हवाले कर दिया। अंत में हुमायूं ने कामरान को अंधा करने का हुक्म दिया और उसे मक्का जाने की आज्ञा दी गई। जहां पर अक्टूबर, 1557 ई० में उसकी मृत्यु हो गई।

कामरान के विरोध का अंत हो जाने पर हुमायूं काबुल का सार्वभौमक स्वामी बन गया। भारत में अनुकूल राजनैतिक परिस्थिति देख (देखें भाग 5.6) हुमायूं ने अपने खोये साम्राज्य को पुनःप्राप्त करने के लिए व्यवस्थितता ढंग से योजना तैयार की। उसने नवम्बर, 1554 ई० में लाहौर की ओर प्रस्थान किया और फरवरी, 1555 ई० में वहां पहुंच गया। थोड़ी बहुत मुश्किलों के बावजूद मुगल सेना का विजय अभियान जारी रहा। उसने शीघ्र ही माच्छीवाड़ा पर अधिकार कर लिया। अंतिम संघर्ष सरहिन्द में हुआ। सिकन्दर शाह सूर को शिवालिक की पहाड़ियों की ओर भागना पड़ा। इस प्रकार दिल्ली प्रस्थान के लिए मार्ग साफ कर लिया गया। किंतु हुमायूं अभी अपने विजय अभियान को पूर्ण एवं सुदृढ़ भी न कर पाया था कि शीघ्र ही 26 जनवरी, 1566 ई० को उसकी मृत्यु हो गई। वह अपने पीछे अपने नाबालिग पुत्र अकबर को विपरीत परिस्थितियों में अकेला छोड़ गया।

बोध प्रश्न 4

1) हुमायूं के अपने भाइयों के साथ संबंधों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

2) उन परिस्थितियों का विवरण कीजिए जिनके कारण हुमायूं को अपने खोये साम्राज्य को पुनः प्राप्त करने में सफलता मिली।

....

....

....

....

....

5.8 सारांश

इस इकाई में हमने बाबर के आक्रमण की पूर्व संध्या पर व्याप्त भारत की राजनैतिक परिस्थितियों का अध्ययन किया।यह स्वीकार करना गलत होगा कि भारत की राजनीति के निर्धारण में धार्मिक हितों की प्रमुख भूमिका थी अपितु उसके निर्धारण में तत्कालीन परिस्थितियों एवं व्यक्तिगत हितों ने प्रमुख भूमिका निभाई। पानीपत में बाबर की सफलता के पश्चात् भी उसका मार्ग सरल न था। उसे न केवल राजपूत सरदारों अपितु निराश

अफगानों का भी सामना करना था। इन संघर्षों के दौरान बाबर के विरुद्ध जो गठबंधन बनाये गये उनमें धर्म प्रमुख आधार नहीं था। हम देख चुके हैं कि "महासंघ" में अफगान एवं राजपूत दोनों थे। यह बाबर का महान नेतृत्व ही था कि विपरीत परिस्थितियों के बावजूद वह सफल रहा। हुमायूं अपने पिता के समान महान् सेनापति न था। अंततः वह अफगानों के संयुक्त मोर्चे का सामना न कर सका। इस प्रकार वह एक समय अपने पिता के साम्राज्य को बनाये न रख सका। उसको भारत छोड़ना पड़ा और वह लगभग 13 वर्षों तक बनवास की स्थिति में भटकता रहा। इस दौरान हमने एक महान् अफगान-शेरशाह का उत्थान देखा। यद्यपि शेरशाह ने कुछ ही समय तक शासन किया किंतु उसने इतिहास पर अपनी सफलता की अमिट छाप छोड़ी। उसने एक ऐसे मजबूत प्रशासनिक ढांचे का निर्माण किया (खंड-4 एवं खंड-5) जिसका अकबर द्वारा अनुसरण किया गया तथा उसने इसे और मजबूती प्रदान की। इसी ढांचे की बदौलत वह संपूर्ण उत्तर भारत को एक प्रशासनिक इकाई के अंतर्गत ला सका। लेकिन शेरशाह के उत्तराधिकारी उसके साम्राज्य को सुदृढ़ता प्रदान करने में असफल रहे। उनके व्यक्तित्व षडयंत्रों एवं व्याप्त अराजकता ने हुमायूं को पुनः हमला करने का शानदार अवसर प्रदान किया। इस बार हुमायूं ने कोई गलती नहीं की। उसने 1555 ई० में पुनः सत्ता प्राप्त की। किंतु शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई। अतः साम्राज्य के सुदृढ़ीकरण के कार्य को अपने पुत्र अकबर के लिए छोड़ गया।

5.9 शब्दावली

मुक्ती : गवर्नर, **इक्ताधारी**

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) भारत में विद्यमान राज्यों तथा एक दूसरे के साथ उनके संबंधों की विवेचना करें। यह भी उद्धृत करें कि कैसे उनके व्यक्तिगत हित, दरबारी षड्यंत्र आदि ने बाबर के पक्ष में कैसे उनकी शक्ति को कम किया। (देखें भाग 5.2)

2) उजबेगों एवं इरनियों के बारे में वर्णन करें। फरगना तथा मध्य एशिया में उनके हितों की व्याख्या करें। किस प्रकार शैबानी खां कीपराजयने मध्य एशिया में उजबेगों को अपनी शक्ति मजबूत करने के लिए अवसर प्रदान किया। (देखें भाग 5.3)

बोध प्रश्न 2

1) वर्णन करें कि किस प्रकार खानवा का युद्ध निर्णायक साबित हुआ न कि पानीपत का। राजपुतों के पतन के बावजूद बाबर की कठिनाइयों का अंत न हुआ। (देखें उपभाग 5.4.1)

2) बिहार में नोहानी अफगानों की पराजय के बाद, नसरत्त शाह ने उनको शरण दी जिसके कारण बाबर को उसके साथ संघर्ष करना पड़ा। (देखें उपभाग 5.4.2)

बोध प्रश्न 3

1) संक्षिप्त राजनैतिक घटनाक्रम का उल्लेख करने के बाद आप उन परिस्थितियों एवं स्थितियों का उल्लेख भी करें जिनके प्रति हुमायूं ने अकर्मण्यता का दृष्टिकोण अपनाया और जो अंततः उसके लिए घातक साबित हुई। (देखें उपभाग 5.5.2)

2) हुमायूं का चरित्र, उसके भाइयों का उसके प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण एवं शेरशाह द्वारा अपनायी गयी अवसरवादी नीतियां हुमायूं की असफलता के लिए उत्तरदायी थीं। (देखें उपभाग 5.5.2)

3) i) 1526 ii) 1539 iii) 1540 iv) 1527 v) 1528

बोध प्रश्न 4

1) देखें उपभाग 5.5.3

2) काबुल में हुमायूं ने कैसे कामरान पर विजय प्राप्त की इसका वर्णन करें। इसी बीच भारत में हुए परिवर्तन पर चर्चा करें। शेरशाह के उत्तराधिकारी शेरशाह के शासन को बनाये रखने में असफल रहे और हुमायूं ने इस स्थिति का पूरा लाभ उठाया। इन सभी तथ्यों को अपने उत्तर में शामिल करें।(देखें उपभाग 5.6, 5.7)